आपातकाल में सृजन फुलवारी

डॉ. सीमा विजयवर्गीय

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

आपातकाल में सृजन फुलवारी

डॉ. सीमा विजयवर्गीय

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

978-93-5372-214-2
संपादक- डॉ. प्रीति समकित सुराना
तकनीकी संपादक एवं आवरण चित्र- संदीप कुमार सोनी, वारासिवनी
मुख्य कार्यालय- 15 नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331
दूरभाष- (कार्या.) 07633-253159
मोबाईल- 9424765259
ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाईट- www-antrashabdshakti
प्रथम संस्करण- 2020, डॉ. सीमा विजयवर्गीय
मूल्य- 50.00 रूपये
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी
THE BOOK WRITTEN BY DR.SEEMA VIJAYVARGIY

वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

आपातकाल में सृजन फुलवारी

सादर नमन,

आज देश जिस भयावह स्थिति से गुजर रहां है उस स्थिति में देश का हर एक व्यक्ति या ये कहें कि विश्व का प्रत्येक मानव आर्थिक, मानसिक और शारीरिक रुप से व्यथित है। कोरोना (COVID19) जैसी महांमारी ने पूरे विश्व को नैराश्य के दौर में लाकर खड़ा कर दिया है।

ऐसे समय में जब हमें अनुशासित रहना है, सामाजिक दूरी बनाकर सीमित संसाधनों में जीना है, एकदम से अपनी दिनचर्या को बदलकर एकाकी जीवन यापन का अभ्यास करना है और मन में महांमारी की दशहत से होने वाली नकारात्मकता और निराशा को भी नियंत्रित करना है तब सबसे सही हल होता है खुद को रचनात्मकता से जोड़ लेना। जो व्यक्ति जिस कला से जुड़ा हो उसे मनः स्थिति के अनुरुप उसी कला में सृजनात्मक हो जाना चाहिए।

बस इसी विचार ने एक दिन प्रेरित किया कि अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन से जुड़े रचनाकारों को एक सृजनात्मक सरप्राइज दिया जाए।

अन्तरा शब्दशक्ति और जीवन के सहभागी प्रिय श्समकित सुरानाश् से परामर्श किया तो उन्होंने भी सहर्ष हांमी भर दी। मेरे संपादन के साथ तकनीकी संपादन की सारी जिम्मेदारी हमारे तकनीकि संपादक प्रिय "संदीप सोनी" ने ले ली और इक्यावन दिन के लॉकडाउन में एक साथ 111 किताबों का निःशुल्क ईसंस्करण तैयार किया जिसका मुद्रित संस्करण देश के परिस्थितियाँ सामान्य होते ही रचनाकारों की इच्छानुसार सशुल्क किया जा सकेगा।

अन्तरा शब्दशक्ति संस्था के सभी सदस्यों ने सृजन को हमेशा प्रेरित किया है जिसके लिए मैं सभी की हृदय से आभारी हूँ।

आपातकाल में कुछ न करने की सजा को कुछ करके खत्म करने में सहयोगी बने समकित, संदीप-टीना सोनी, बच्चों और पूरे परिवार की आभारी हूँ जिन्होंने हर पल मुझे मजबूत बनाए रखा।

आशा है ये सरप्राइज सभी रचनाकारों को उत्साहित करेगा और पाठकों को हमारा यह प्रयास पसंद आएगा। हमें प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

सादर आभार

संस्थापक एवं संपादक
अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
एवं पंजीकृत संस्था
डॉ प्रीति समकित सुराना

अनुक्रमणिका

1.	रौनक	6
2.	कुछ समझ आता नहीं	7
3.	अगर हो सके तो	8
4.	प्रेम ही प्रेम	9
5.	ढूँढ रही हूँ	10
6.	पीले पत्ते	11
7.	रखता है,..	12
8.	नादानियाँ	13
9.	बताओ कुछ हमें	14
10.	देखो घर ख़ुश है	15
11.	एक सच्चा आदमी	16
12.	अंधेरा	17
13.	डर काहे का	18
14.	अगर तुम कहो तो	19
15.	अच्छा है	20
16.	परचम रहे	21

रौनक

आएगी रुत सुंदर, फिर रौनक़ छाएगी,
दिन होंगे कुछ ख़ुशतर, फिर रौनक़ छाएगी।

जाने कैसी हवा चली, फैला है अब डर,
रख लेना धीरज पर, फिर रौनक़ छाएगी।

आने वाले कल को लेकर हैं चिंताएँ,
लेकिन होगा बेहतर, फिर रौनक़ छाएगी।

बचे हुए जो काम नहीं पूरे हो पाए,
बैठें उनको लेकर, फिर रौनक़ छाएगी।

बहुत खो चुके हैं हम इस लापरवाही से,
अब ग़लती तू मत कर, फिर रौनक़ छाएगी।

जान से प्यारी होती कोई चीज़ नहीं है,
कुछ दिन रह ले घर पर, फिर रौनक़ छाएगी।

वक्त एक-सा नहीं सदा रहता जीवन में,
बदलेगा ये मंज़र, फिर रौनक़ छाएगी।

थोड़ा ध्यान तू रख ले बस, फिर डर काहे का,
साथ हैं अपने रघुवर, फिर रौनक़ छाएगी।

कुछ समझ आता नहीं

आ पड़ी विपदा ये भारी, कुछ समझ आता नहीं,
वक्त बन बैठा शिकारी, कुछ समझ आता नहीं।

मौत से बदतर है हालत, ज़िन्दगी ने भी ये क्यों,
सिर पे दे मारी कुठारी, कुछ समझ आता नहीं।

कल का आटा ख़त्म, छूटी है दिहाड़ी आज भी,
कौन देगा अब उधारी, कुछ समझ आता नहीं।

आज फिर कर्फ़्यू लगा है और ख़ाली पेट है,
सोच में बैठा भिखारी, कुछ समझ आता नहीं।

शादियाँ सर पर खड़ी हैं और ये हालात हैं,
सोचकर ये अक़्ल हारी, कुछ समझ आता नहीं।

गाँव तक पहुँचे न बच्चे, शहर में ही फंस गए,
राह देखे माँ बिचारी, कुछ समझ आता नहीं।

ये महल तो हैं सुरक्षित चारदीवारी में सब,
झोपड़ी संकट की मारी, कुछ समझ आता नहीं।

अगर हो सके तो

वो मीठा तराना, अगर हो सके तो,
मुझे फिर सुनाना, अगर हो सके तो।

जो कबिरा की झोली में हैं ढाई आखर,
उन्हें गुनगुनाना, अगर हो सके तो।

जहाँ इक तड़प हो, समर्पण हो दिल में,
वो रिश्ते निभाना, अगर हो सके तो।

यहाँ मेरे पुरखों की यादें बसी हैं,
ये घर मत ढहाना, अगर हो सके तो।

जला तो रहे हो महल ख़्वाहिशों के,
इन्हें फिर बनाना, अगर हो सके तो।

कभी हसरतों ने जलाया था दीपक,
वो दीपक बचाना, अगर हो सके तो।

नहीं हल निकालो सुनो नफ़रतों से,
दिलों को मिलाना, अगर हो सके तो।

प्रेम ही प्रेम

मेरी ग़ज़लों में बस प्रेम ही प्रेम है,
इसके हर्फ़ों में बस प्रेम ही प्रेम है।

उसने जन्नत बसा दी है मेरे लिए,
इन फ़िज़ाओं में बस प्रेम ही प्रेम है।

वो नज़र चाहे राधा कि मीरा की हो,
इनकी नज़रों में बस प्रेम ही प्रेम है।

अपनी दुनिया रचाती है माँ प्रेम से,
उसकी अँखियों में बस प्रेम ही प्रेम है।

याद रक्खेंगी सदियाँ सुनो ताज को,
इसकी ईंटों में बस प्रेम ही प्रेम है

वो खिलाती रही राम को प्यार से,
जूठे बेरों में बस प्रेम ही प्रेम है।

तू ही चाहत मेरी, तू इबादत मेरी,
मेरी साँसों में बस प्रेम ही प्रेम है।

प्रेम पूजा है सुन प्रेम है बन्दगी,
इन अज़ानों में बस प्रेम ही प्रेम है।

मैं चली आई अब तेरे दर पे ख़ुदा,
तेरे नैनों में बस प्रेम ही प्रेम है।

ढूँढ रही हूँ

बीत गईं जो, मैं वो घड़ियाँ ढूँढ रही हूँ,
सपनों में अब भी वो परियाँ ढूँढ रही हूँ।

घर-दफ़्तर, चौका-चूल्हा और पढ़ना-लिखना,
इन सबके ही बीच मैं ख़ुशियाँ ढूँढ रही हूँ।

जिन आँखों में राधा का ही प्यार बसा था,
सदियों से मैं वो ही अँखियाँ ढूँढ रही हूँ।

जाने कैसा जादू था माँ के हाथों में,
वो ही जादू , वो ही बड़ियाँ ढूँढ रही हूँ।

जहाँ प्रेम ही जीने का आधार बना हो,
अब भी वो गोकुल की गलियाँ ढूँढ रही हूँ

चहक-चहककर चहकाती थीं आँगन सारा,
कहाँ गईं अब वो सब चिड़ियाँ ढूँढ रही हूँ।

बचपन की उन गलियों में घुसकर हौले से,
वही कटारे, वो ही अमियाँ ढूँढ रही हूँ।

राम-कृष्ण और गौतम-नानक को पढ़कर मैं,
आज फ़िज़ा में पिछली सदियाँ ढूँढ रही हूँ।

पीले पत्ते

ज़िन्दगी के गुर सिखाकर, चल दिए हैं पीले पत्ते,
इक नया रस्ता बताकर, चल दिए हैं पीले पत्ते।

थे कभी ये भी हरे और थे कभी ये भी सजीले,
वक्त की रंगत दिखाकर, चल दिए हैं पीले पत्ते।

हाथ में कुछ भी नहीं हम साथ लेकर जा रहे हैं,
ये सबक़ सबको सिखाकर, चल दिए हैं पीले पत्ते।

थी पसीने की कमाई ज़िन्दगीभर जो जुटाई,
वो सभी दौलत लुटाकर, चल दिए हैं पीले पत्ते।

कल तलक तो साथ थे ये, कल तलक तो पास थे पर,
मोहमाया सब भुलाकर, चल दिए हैं पीले पत्ते।

हर तरफ ख़ुशबू का पहरा, हर तरफ रौनक़ ही रौनक़,
अपनी फुलवारी सजाकर, चल दिए हैं पीले पत्ते।

तुम सजाना फिर से गुलशन, तुम बढ़ाना नस्ल मेरी,
कोंपलों को ये बताकर, चल दिए हैं पीले पत्ते।

रखता है,..

कोई घाटी, कोई पर्वत रखता है,
हर इक पंछी अपनी क़िस्मत रखता है।

ऐसा लगता है तुझसे बातें करके,
तू भी एक ख़ुशी की चाहत रखता है।

आ जाता है साँझ ढले ही घर वापस,
अपने पुरखों की वो इज़्ज़त रखता है।

करता रहता है मुझसे बातें हरपल,
वक्त भी जाने कितनी फ़ुर्सत रखता है।

बाहर से पत्थर दिखता है वो लेकिन,
दिल के तहख़ाने में उल्फ़त रखता है।

इक पंछी दो दानों में ख़ुश, लेकिन इक,
चाँद को छू लेने की हसरत रखता है।

अपने और पराए का भी ज्ञान नहीं,
दिल भी जाने कैसी ग़फ़लत रखता है।

नादानियाँ

कर रहा तू आज कितनी ही यहाँ नादानियाँ,
रोक पाएँगी तुझे क्या कल तेरी बरबादियाँ।

एक तिनके के बराबर भी नहीं तेरी बिसात,
मिल गई हैं ख़ाक में कितनी यहाँ आबादियाँ।

चाहे जितनी ज़ोर से तू चीख़ ले हैवानियत,
जीतकर आख़िर रहेंगी देखना सच्चाइयाँ।

याद रख जो बो रहा है फ़स्ल वो काटेगा तू,
तुझसे भी कोई बड़ा है, छोड़ ये मनमानियाँ।

तू अगर इंसान है, इंसानियत क़ायम तो रख,
इस चमन के भी लिए हैं तेरी ज़िम्मेदारियाँ।

कुछ ही पल तो हैं नवाज़े देख उस रब ने हमें,
प्यार से तू जी यहाँ, कुछ छोड़ जा अच्छाइयाँ।

उसने बख़्शा है हमें खिलता हुआ गुलशन यहाँ,
आग इसमें मत लगा, महका अरे फुलवारियाँ।

बताओ कुछ हमें

सीपियों, तुम ही बताओ कुछ हमें,
मछलियों, तुम ही बताओ कुछ हमें।

कब तलक हाथों में सबके आओगी,
रोटियो, तुम ही बताओ कुछ हमें।

घर से बाहर क्यों तुम्हें लगता है डर,
लड़कियो, तुम ही बताओ कुछ हमें।

है कोई उम्मीद भरने की तुम्हें,
खाइयो, तुम ही बताओ कुछ हमें।

याद क्यों आती रही मुरली की धुन,
गोपियो, तुम ही बताओ कुछ हमें।

आँसुओं में भीगती कब से रहीं,
पातियों, तुम ही बताओ कुछ हमें।

क्या कभी सच को भी मिलता न्याय है,
अर्ज़ियो तुम ही बताओ कुछ हमें।

देखो घर ख़ुश है

हैं सबके सब घर पर, देखो घर ख़ुश है,
लेकिन सूना बाहर, देखो घर ख़ुश है।

बड़े बुज़ुर्गों के चेहरे पर रौनक़ है,
नहीं अकेले अब घर, देखो घर ख़ुश है,।

सुबह-सुबह अब भागम-भाग नहीं होती,
बंद पड़े हैं दफ़्तर, देखो घर ख़ुश है।

वही बनाकर खा लेते जो है घर में,
कुछ बेहतर, कुछ कमतर, देखो घर ख़ुश है।

चिंता की रेखाएँ तो हैं माथे पर,
सोच रहे पर मिलकर, देखो घर ख़ुश है।

नहीं दिखाई देते मकड़ी के जाले,
कोना-कोना ख़ुशतर, देखो घर ख़ुश है।

खेल-खेलकर थक जाते हैं जब बच्चे,
लड़ लेते हैं अक्सर, देखो घर ख़ुश है।

एक सच्चा आदमी

छोड़ बैसाखी चलेगा एक सच्चा आदमी,
मंज़िलें हासिल करेगा एक सच्चा आदमी।

रेशमी रूमाल में कितना लपेटो झूठ को,
सच को ही, पर सच कहेगा एक सच्चा आदमी।

एक रोटी कम मिले, इस पर उसे सन्तोष है,
पर उसूलों पर चलेगा एक सच्चा आदमी।

दर्द में उसके भले चाहे न कोई साथ हो,
साथ पर सबके रहेगा एक सच्चा आदमी।

भावनाओं की भले तुझको न कोई क़द्र हो,
फ़िक्र तेरी पर करेगा एक सच्चा आदमी।

रहबरों से ही यहाँ जब रहज़नी का डर लगे,
अपने दम पर ही चलेगा एक सच्चा आदमी।

लू-लपट चाहे तपन हो या सफ़र सहरा का हो,
इक नमी दिल में रखेगा एक सच्चा आदमी।

अंधेरा

ये अंधेरा देखना तू एक दिन छँट जाएगा,
और चंदा बदलियों के संग फिर इठलाएगा।

दूर तक उजड़ा-सा मंज़र और ये वीरानियाँ,
देखना तू एक दिन गुलशन यही मुस्काएगा।

फिर से बुलबुल, तितलियाँ, फिर से बहारें आएँगी,
ठूँठ बनकर जो खड़ा है वो शजर खिल जाएगा।

बंद कमरों से निकलकर, तू ज़रा छत पर तो आ,
पंछियों की धुन में बहके तेरा दिल भी गाएगा।

दूरियाँ, तनहाइयाँ सब वक़्त ही देकर गया,
एक दिन ये वक़्त ही फिर से गले मिलवाएगा।

है बड़ा तुझसे भी कोई ले सबक इस दौर से,
वो सबक ही तुझको पढ़ना है, जो वो पढ़वाएगा।

डर काहे का

घर-घर में श्रीराम अरे फिर डर काहे का,
बनेगें बिगड़े काम अरे फिर डर काहे का।

चलता चल अपनी राहों पर तू दृढ़ होकर,
लेकर प्रभु का नाम अरे फिर डर काहे का।

हर मुश्किल का हल तो इक दिन निकलेगा ही,
भज तू सीताराम अरे फिर डर काहे का।

जो होना है वो तो होकर ही मानेगा,
बस में नहीं अंजाम अरे फिर डर काहे का।

वक़्त बदल जाता है इक दिन में ही कितना,
सुबह, दुपहरी,शाम अरे फिर डर काहे का।

आएँगे अच्छे दिन गुलशन फिर महकेगा,
साथ हैं राधेश्याम अरे फिर डर काहे का।

राम नाम लेकर करता जा अच्छी करनी,
जो भी हो परिणाम अरे फिर डर काहे का।

अगर तुम कहो तो

कुछ गुनगुनाऊँ, अगर तुम कहो तो,
वही गीत गाऊँ, अगर तुम कहो तो।

मेरे चाँद क्यों हो ख़फ़ा ये बताओ,
चलो मैं मनाऊँ, अगर तुम कहो तो।

किताबों में क्या यूँ ही खोए रहोगे,
तुम्हें कुछ बताऊँ, अगर तुम कहो तो।

बताओ न मुझको तुम्हें भाए जो भी,
वही मैं बनाऊँ, अगर तुम कहो तो।

सुना दीं मेरे पास जितनी थीं बातें,
ग़ज़ल भी सुनाऊँ, अगर तुम कहो तो।

रुका सा लगे है समय यूँ न रूठो,
चलो अब हँसाऊँ, अगर तुम कहो तो।

तुम्हारे बिना तो मैं कुछ भी नहीं हूँ,
हक़ीक़त बताऊँ, अगर तुम कहो तो।

अरे एक पल में ही निंदिया ने घेरा,
मैं लोरी सुनाऊँ, अगर तुम कहो तो।

अच्छा है

फिर कुछ राह निकल जाए तो अच्छा है,
अब ये हाल सँभल जाए तो अच्छा है।

सुबह शाम बस एक नज़ारा आँखों में,
ये तस्वीर बदल जाए तो अच्छा है।

गुमसुम सी बैठी है कैसी ज़ीस्त यहाँ,
इक मुस्कान मचल जाए तो अच्छा है।

उमड़ पड़े हैं आँसू इक दरिया बनकर,
पर ये दर्द निकल जाए तो अच्छा है।

पंछी,बादल, मस्त हवा होगी छत पर,
दिल कुछ देर बहल जाए तो अच्छा है।

डर लेकर आती हैं जिसकी सब किरणें,
वो सूरज भी ढल जाए तो अच्छा है।

बच्चे खेलेंगे, दौड़ेंगे गलियों में,
वक्त बुरा भी टल जाए तो अच्छा है।

परचम रहे

दुनिया में इसकी गूँज हो, आकाश में परचम रहे,
मेरे वतन में गंगा-यमुना का वही संगम रहे।

जाने कहाँ पर खो गई ख़ुशबू हमारे शहर की,
है आरज़ू पहले-सा वो महका हुआ मौसम रहे।

सब नीम-पीपल कट गए हैं गुलमुहर के शहर में,
आबो-हवा बदली हुई, बरगद न अब शीशम रहे।

दादी सुनाती थी कभी मिसरी सरीखी लोरियाँ,
वो प्यार का लहजा बड़ों का हममें भी क़ायम रहे।

आँगन में खिलती धूप में जुड़ते सभी थे प्यार से,
खाटों पे वो पसरी हुई दोपहर भी हरदम रहे।

इतने दिमाग़ी हो गए हम भूल बैठे प्यार को,
चाहत यही बस प्यार से लबरेज़ ये आदम रहे।

हम तो सभी हैं इक समंदर की ही लहरें अनगिनत,
बहते रहें हम साथ ही जब तक कि दम में दम रहे।

मलहार हो, त्योहार हो, ख़ुशियों भरा संसार हो,
हम हो न हों, महका हुआ पर ये सदा आलम रहे।

हिन्द व हिन्दी का सम्मान
है प्रमाण देशभक्ति का
आइए करें
सृजन शब्द से शक्ति का

रचनाकार

डॉ. सीमा विजयवर्गीय

२/८४, स्कीम दस-बी, अलवर
राजस्थान-३०१००१

Email & seemavijay000@gmail.com

70737-13013

कितने हँसते- खिलखिलाते दिन चल रहे थे। अचानक जैसे गाज गिरी और सब कुछ थम गया। कभी सोचा भी न था कि ऐसा भी हो जाएगा। कोरोना जैसी भयानक बीमारी से पूरा विश्व त्रस्त हो जाएगा। लोकडाउन की स्थिति आ जाएगी और सब घर में ही पैक हो जाएँगे, बाहरी दुनिया से पूरी तरह कट जाएँगे। लाखों लोग इस बीमारी से मारे गए। इन सब बातों का मन पर बुरा असर पड़ा। एक संवेदनशील व्यक्ति तो परस्थितियों से अधिक प्रभावित होता है। वह न केवल अपना आत्मविश्वास बनाए रखता है, अपितु समष्टि को भी अपनी लेखनी के माध्यम से सम्बल प्रदान करता है, ताकि पूरी मानवता मिलकर समस्या से निजात पा जाए।

इन दिनों घर में ही रहना पड़ा। इस दौरान पढ़ने-लिखने को पर्याप्त समय मिला, पर बाहरी परिवेश से मन दुखी भी होता रहा। इस तरह मानव-संस्कृति का संकट में पड़ जाना किसी के लिए भी हितकर नहीं। इन दिनों जैसी मानसिक स्थितियाँ रहीं, वही सब लेखन में उतर आईं और गजल का रूप ले लिया। अब इन गजलों को आप भी पढ़िए और आज के समय को महसूस कीजिए। अंतरा शब्द शक्ति का यह प्रयास बहुत प्रेरणादायक है मेरे लिए मैं अपनी बात इस माध्यम से पाठकों तक पहुँचा पा रही हूँ।

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

15, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जिला- बालाघाट (म.प्र.), पिन 481331
संपर्क- 9424765259, अणुडाकः antrashabdshakti@gmail.com

978-93-5372-214-2

मूल्य 50/-

अन्तरा शब्दशक्ति के लिंक्स
Website:- www.antrashabdshakti.com
Facebook page:- https://www.facebook.com/antrashabdshakti/
Fecbook group:- https://www.facebook.com/groups/antraashabdshakti/